ফাতওয়া নাম্বার:৫০৫ প্রকাশকালঃ২২-১০-২০২৪ ইং

গুনাহের কারণে মা-বাবার উপর রাগ করা

প্রশ্ন:

মা-বাবা যদি দীন বিরোধী কাজ করেন, তাহলে তাদের ওপর কি রাগ করা যাবে?

-মুহাম্মাদ হিশাম

উত্তর:

بسم الله، والحمد لله، والصلاة والسلام على رسول الله، أما بعد!

রাগ মানুষের স্বভাবজাত একটি বিষয়। সুতরাং দীন-বিরোধী কাজ যেই করুক, তা দেখলে একজন মুমিনের রাগ ওঠবে এবং ওঠা উচিত। অনেক ক্ষেত্রে রাগ ওঠা বান্দার ইচ্ছা ও ইখতিয়ারের বাইরে থাকে। বান্দার ইখতিয়ারে যেটা থাকে সেটা হচ্ছে, রাগের বহিঃপ্রকাশ। কোন ক্ষেত্রে রাগের কতটুকু প্রকাশ ঘটবে, কীভাবে

ঘটবে, সেটা বিচার বিবেচনা করে সে অনুযায়ী কাজ করা বান্দার দায়িত্ব।

পিতা-মাতার ক্ষেত্রে রাগ প্রকাশের সুযোগ নেই। আল্লাহ তাআলা পবিত্র কুরআনে মা-বাবার সাথে সদাচার করার নির্দেশ দিয়েছেন, যদিও তারা কাফের হন এবং সন্তানকে কুফরি করার নির্দেশ করেন। এমনকি আল্লাহ তাআলা মা-বাবার প্রতি বিরক্ত হয়ে সামান্য 'উফ' শব্দ উচ্চারণ করতেও নিষেধ করেছেন। তাই মা-বাবা কোনো গুনাহ বা দীন-বিরোধী কাজ করলেও তাদেরকে নম্র ভাষায় বুঝাতে হবে এবং তাদের জন্য দোয়া ও ইস্তেগফার করতে হবে। কোনো অবস্থাতেই তাদের উপর রাগ ঝাড়া যাবে না।

আল্লাহ তাআলা বলেন,

{وَوَصَّيْنَا الْإِنْسَانَ بِوَالِدَيْهِ حَمَلَتْهُ أُمُّهُ وَهْنًا عَلَى وَهْنٍ وَفِصَالُهُ فِي عَامَيْنِ أَنِ اشْكُرْ لِي وَلِوَالِدَيْكَ إِلَيَّ الْمَصِيرُ (١٤) وَإِنْ جَاهَدَاكَ عَلَى أَنْ تُشْرِكَ بِي مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا وَصَاحِبْهُمَا فِي الدُّنْيَا مَعْرُوفًا وَاتَّبِعْ سَبِيلَ مَنْ أَنَابَ إِلَيَّ ثُمَّ إِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَأُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ (١٥)} [لقمان: ١٤، ١٥]

"আমি মানুষকে তার পিতা-মাতার সঙ্গে সদাচারের জোর নির্দেশ দিয়েছি। কারণ তার মা কষ্টের পর কষ্ট সয়ে গর্ভে ধারণ করে। আর তার দুধ ছাড়ানো হয় দুই বছরে। তুমি শোকর আদায় কর, আমার এবং তোমার পিতা-মাতার। আমারই কাছে তোমাদের ফিরে আসতে হবে। তারা যদি এমন কাউকে আমার সঙ্গে শরীক করার জন্য তোমাকে চাপ দেয়, যে সম্পর্কে তোমার কোনো জ্ঞান নেই, তাদের কথা মানবে না। তবে দুনিয়ায় তাদের সাথে সদ্ভাবে থাকবে। এমন ব্যক্তির পথ অবলম্বন করো, যে একান্তভাবে আমার অভিমুখী হয়েছে। অতঃপর তোমাদেরকে আমার কাছেই ফিরে আসতে হবে। তখন আমি তোমাদের অবহিত করব, তোমরা যা-কিছু করতে।" -সূরা লুকমান: ১৪-১৫

আয়াতের তাফসীরে আল্লামা তাকী উসমানী (হাফিযাহুল্লাহ) বলেন,

دین کے معاملے میں اگر والدین کوئی غلط بات کہیں تو ان کی بات ماننا تو جائز نہیں ہے؛ لیکن ان کی بات رد کرنے کے لئے کوئی ایسا طریقہ اختیار نہیں کرنا چاہیئے جو ان کے لئے تکلیف دہ

ہو، یا جس سے وہ اپنی توہین محسوس کریں، بلکہ نرم الفاظ میں ان کو بتا دینا چاہیے کہ میں آپ کی یہ بات ماننے سے معذور ہوں اور صرف اتنا ہی نہیں اپنے عام برتاؤ میں بھی ان کے ساتھ بھلائی کا معاملہ کرتے رہنا چاہیے، مثلاً ان کی خدمت کرنا، ان کی مالی امداد کرنا، وہ بیمار ہو جائیں تو ان کی تیمار داری کرنا وغیرہ۔

توضیح القرآن: ۳/۱۲۵۹ (ط. مکتبہ معارف القرآن)

"অর্থাৎ দীনের ব্যাপারে পিতা-মাতা কোনো অন্যায় কথা বললে তা মানা তো জায়েয হবে না, কিন্তু তাদের কথা এমন পন্থায় রদ করা যাবে না, যা তাদের জন্য কষ্টদায়ক হয় বা যাতে তারা নিজেদেরকে অপমানিত বোধ করে। বরং তাদেরকে নম্র ভাষায় বুঝিয়ে দেয়া উচিত যে, আমি আপনাদের কথা মানতে অপারগ। কেবল এতটুকুই নয়, বরং সাধারণভাবে অন্য সকল ক্ষেত্রেই তাদের সাথে সদাচার করতে হবে। তাদের খেদমত করতে হবে, আর্থিকভাবে তাদের সাহায্য করতে হবে এবং তারা অসুস্থ হয়ে পড়লে তাদের সেবা-যত্ন করতে হবে ইত্যাদি।" -তাওযিহুল কুরআন, উর্দু: ৩/১২৫৯

আল্লাহ তাআলা অন্যত্র বলেন,

وَقَضَى رَبُّكَ أَلَّا تَعْبُدُوا إِلَّا إِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا إِمَّا يَبْلُغَنَّ عِنْدَكَ الْكِبَرَ أَحَدُهُمَا أَوْ كِلَاهُمَا فَلَا تَقُلْ لَهُمَا أُفٍّ وَلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَهُمَا قَوْلًا كَرِيمًا وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ وَقُلْ رَبِّ ارْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيَانِي صَغِيرًا.

–سورة بني إسرائيل: ٢٣–٢٤

"তোমার প্রতিপালক নির্দেশ দিয়েছেন যে, তাঁকে ছাড়া অন্য কারো ইবাদত করো না, পিতা-মাতার সাথে সদ্ব্যবহার করো, পিতা-মাতার কোনো একজন কিংবা উভয়ে যদি তোমার কাছে বার্ধক্যে উপনীত হয়, তবে তাদেরকে 'উফ্' পর্যন্ত বলো না এবং তাদেরকে ধমক দিও না; বরং তাদের সাথে সম্মানজনক কথা বলো। তাঁদের প্রতি মমতাপূর্ণ আচরণের সাথে তাঁদের সামনে নিজেকে বিনয়াবনত করো এবং দোয়া করো, হে আমার প্রতিপালক! তাঁরা যেভাবে আমার শৈশবে আমাকে লালন-পালন করেছে, তেমনি আপনিও তাঁদের প্রতি রহমতের আচরণ করুন।" -সূরা বনি ইসরাঈল ১৭: ২৩-২৪

فقط، والله تعالى أعلم بالصواب

المصادر والمراجع

أحكام القرآن لابن الفرس (٣/ ٤١٦): وقوله تعالى: {وصاحبهما في الدنيا معروفًا}: يعني الأبوين الكافرين، أي صلهما وادعهما برفق. اهـ

تفسير القرطبي (١٤/ ٦٥): قوله تعالى: (وصاحبهما في الدنيا معروفا) نعت لمصدر محذوف، أي مصاحبا معروفا، يقال صاحبته مصاحبة ومصاحبا. و" معروفا" أي ما يحسن. والآية دليل على صلة الأبوين الكافرين بما أمكن من المال إن كانا فقيرين، وإلانة القول والدعاء إلى الإسلام برفق. اهـ

تفسير ابن كثير ت سلامة (٦/ ٣٣٧): وقوله: {وإن جاهداك على أن تشرك بي ما ليس لك به علم فلا تطعهما} أي: إن حرصا عليك كل الحرص على أن تتابعهما على دينهما، فلا تقبل منهما ذلك، ولا يمنعنك ذلك من أن تصاحبهما في الدنيا معروفا، أي: محسنا إليهما، {واتبع سبيل من أناب إلي} يعني: المؤمنين، {ثم إلي مرجعكم فأنبئكم بما كنتم تعملون} . اهـ

صحيح مسلم (٢٤٩١) : عن أبي كثير يزيد بن عبد الرحمن، حدثني أبو هريرة، قال: كنت أدعو أمي إلى الإسلام وهي مشركة، فدعوتها يوما فأسمعتني في رسول الله صلى الله عليه وسلم ما أكره، فأتيت رسول الله صلى الله عليه وسلم وأنا أبكي، قلت يا رسول الله إني كنت أدعو أمي إلى الإسلام فتأبى علي، فدعوتها اليوم فأسمعتني فيك ما أكره، فادع الله أن يهدي أم أبي هريرة فقال رسول الله صلى الله عليه وسلم: «اللهم اهد أم أبي هريرة» فخرجت مستبشرا بدعوة نبي الله صلى الله عليه وسلم، فلما جئت فصرت إلى الباب،

فإذا هو مجاف، فسمعت أمي خشف قدمي، فقالت: مكانك يا أبا هريرة وسمعت خضخضة الماء، قال: فاغتسلت ولبست درعها وعجلت عن خمارها، ففتحت الباب، ثم قالت: يا أبا هريرة أشهد أن لا إله إلا الله، وأشهد أن محمدا عبده ورسوله، قال فرجعت إلى رسول الله صلى الله عليه وسلم، فأتيته وأنا أبكي من الفرح، قال: قلت: يا رسول الله أبشر قد استجاب الله دعوتك وهدى أم أبي هريرة، فحمد الله وأثنى عليه وقال خيرا، قال قلت: يا رسول الله ادع الله أن يحببني أنا وأمي إلى عباده المؤمنين، ويحببهم إلينا، قال: فقال رسول الله صلى الله عليه وسلم: «اللهم حبب عبيدك هذا - يعني أبا هريرة - وأمه إلى عبادك المؤمنين، وحبب إليهم المؤمنين» فما خلق مؤمن يسمع بي ولا يراني إلا أحبني .

مصنف ابن أبي شيبة (٥/ ٢١٨): ٢٥٤٠٤ - حدثنا ابن علية، عن عمارة أبي سعيد، قال: قلت للحسن: إلى ما ينتهي العقوق؟ قال: «أن تحرمهما، وتهجرهما، وتحد النظر إلى وجه والديك«

- 25407حدثنا يزيد بن هارون، قال: أخبرنا سليمان التيمي، عن سعد بن مسعود، عن ابن عباس، قال: " ما من مسلم له أبوان فيصبح وهو محسن إليهما إلا فتح الله له بابين من الجنة، ولا يمسي وهو مسيء إليهما إلا فتح الله له بابين من النار، ولا سخط عليه واحد منهما فيرضى الله عنه حتى يرضى عنه، قال: قلت: وإن كانا ظالمين؟ قال: «وإن كانا ظالمين«

وفي الفروق للإمام القرافي ١/١٤٥: ويدل على تحريم أصل العقوق قوله تعالى {فلا تقل لهما أف} [الإسراء: ٢٣] وإذا حرم هذا القول حرم ما فوقه بطريق الأولى ويدل على مخالفتهما في الواجبات قوله تعالى {وإن جاهداك على أن تشرك بي ما ليس لك به علم فلا تطعهما} [لقمان: ١٥] وفي الآية فائدتان: الفائدة الأولى: أن الأبوين يجب برهما ويحرم عقوقهما وإن كانا كافرين فإنه لا يأمر بالشرك إلا كافر ومع ذلك فقد صرحت الآية بوجوب برهما. الفائدة الثانية: أن مخالفتهما واجبة في أمرهما بالمعاصي ويؤكد ذلك قوله – عليه السلام – «لا طاعة لمخلوق في معصية الخالق» . اهـ

الفواكه الدواني على رسالة ابن أبي زيد القيرواني (٢/ ٢٩٠): (ومن الفرائض) العينية على كل مكلف (بر الوالدين) أي الإحسان إليهما (ولو كانا فاسقين) بغير الشرك بل (وإن كانا مشركين) للآيات الدالة على العموم، والحقوق لا تسقط بالفسق ولا بالمخالفة في الدين، فيجب على الولد المسلم أن يوصل أباه الكافر إلى كنيسته إن طلب منه ذلك وعجز عن الوصول بنفسه لنحو عمى كما قاله ابن قاسم، كما يجب عليه أن يدفع لهما ما ينفقانه في أعيادهما لا ما يصرفانه في نحو الكنيسة أو يدفعانه للقسيس. ثم فرع على الفريضة المفهومة من قوله من الفرائض قوله: (فليقل لهما) أي للوالدين (قولا لينا) أي لطيفا دالا على الرفق بهما والمحبة قال تعالى: **{فلا تقل لهما أف ولا تنهرهما وقل لهما قولا كريما}** [الإسراء: ٢٣] {واخفض لهما جناح الذل من الرحمة وقل ربي ارحمهما كما ربياني صغيرا} [الإسراء: ٢٤] قال المفسر: أي ورحماني

صغيرا، ويجتنب غليظ القول الموجب لنفرتهما منه ويناديهما بيا أمي ويا أبي، وليقل لهما ما ينفعهما في أمر دينهما ودنياهما بأن يعلمهما ما يحتاجان إليه من الاعتقاديات ومن الفرائض والسنن وفضائل الأعمال ومن أنواع المعاملات إن احتاجا إليها. اهـ

الزواجر عن اقتراف الكبائر (٢/ ١٠٥): الكبيرة الثانية بعد الثلاثمائة: عقوق الوالدين أو أحدهما وإن علا ولو مع وجود أقرب منه) قال – تعالى –: **{واعبدوا الله ولا تشركوا به شيئا وبالوالدين إحسانا}** [النساء: ٣٦] قال ابن عباس: يريد البر بهما مع اللطف ولين الجانب، فلا يغلظ لهما في الجواب، ولا يحد النظر إليهما، ولا يرفع صوته عليهما، بلى يكون بين يديهما مثل العبد بين يدي السيد تذللا لهما، وقال – تعالى –: **{وقضى ربك ألا تعبدوا إلا إياه وبالوالدين إحسانا إما يبلغن عندك الكبر أحدهما أو كلاهما فلا تقل لهما أف ولا تنهرهما وقل لهما قولا كريما}** [الإسراء: ٢٣] **{واخفض لهما جناح الذل من الرحمة وقل ربي ارحمهما كما ربياني صغيرا}** [الإسراء: ٢٤] أمر الله – تعالى – بالإحسان إليهما، وهو البر والشفقة والعطف والتودد وإيثار رضاهما. ونهى عن أن يقال لهما أف، إذ هو كناية عن الإيذاء بأي نوع كان حتى بأقل أنواعه، ومن ثم ورد أنه – صلى الله عليه وسلم –: قال: «لو علم الله شيئا أدنى من أف لنهى عنه، فليعمل العاق ما شاء أن يعمل فلن يدخل الجنة، وليعمل البار ما شاء أن يعمل فلن يدخل النار» . ثم أمر بأن يقال لهما القول الكريم: أي اللين اللطيف المشتمل على العطف

والاستمالة وموافقة مرادهما وميلهما ومطلوبهما ما أمكن سيما عند الكبر، فإن الكبير يصير كحال الطفل وأرذل؛ لما يغلب عليه من الخرف وفساد التصور، فيرى القبيح حسنا والحسن قبيحا، فإذا طلبت رعايته وغاية التلطف به في هذه الحالة وأن يتقرب إليه بما يناسب عقله إلى أن يرضى ففي غير هذه الحالة أولى.

ثم أمر – تعالى – بعد القول الكريم بأن يخفض لهما جناح الذل من القول بأن لا يكلمهما إلا مع الاستكانة والذل والخضوع وإظهار ذلك لهما، واحتمال ما يصدر منهما، ويريهما أنه في غاية التقصير في حقهما وبرهما، وأنه من أجل ذلك ذليل حقير، ولا يزال على نحو ذلك إلى أن يثلج خاطرهما، ويبرد قلبهما عليه، فينعطفا عليه بالرضا والدعاء. اهـ

رد المحتار (٤/ ٧٨): [فرع] في فصول العلامي: إذا رأى منكرا من والديه يأمرهما مرة، فإن قبلا فبها، وإن كرها سكت عنهما واشتغل بالدعاء والاستغفار لهما فإن الله تعالى يكفيه ما أهمه من أمرهما. اهـ

فتاوى اللكنوي (نفع المفتي والسائل، تهذيب: صلاح الحاج، ص: ٤٥٧-٤٥٨)

كتاب النوازل :

خلافِ شرع امر پر والدین کو نصیحت؟

سوال(٦٧):- کیا فرماتے ہیں علماء دین ومفتیانِ شرع متین مسئلہ ذیل کے بارے میں کہ: اگر ماں باپ کو خلافِ شرع کوئی کام کرتا ہوا دیکھے، تو کیا کرے؟ اُن کی اِصلاح کے لئے کیا طریقہ اختیار کرنا چاہئے؟

باسمہٖ سبحانہ تعالی

الجواب وباللّٰہ التوفیق: اگر اولاد ماں باپ کو فسق وفجور یا خلافِ شرع کام کرتا ہوا دیکھے، تو ڈانٹ ڈپٹ اور اُن کی شان میں گستاخی کرنے کی اِجازت نہیں ہے؛ بلکہ اُس پر لازم ہے کہ محبت بھرے انداز میں اُن کے سامنے اس کام پر اللہ کی ناراضگی اور وعیدوں کا تذکرہ کرے، اگر بات کو قبول کرلیں تو بہت اچھا، ورنہ بار بار اصرار نہ کرے؛ بلکہ اُن کے لئے اللہ تعالیٰ سے استغفار کرے، اور ہدایت کی دعا کرے۔ قال اللّٰہ تبارک وتعالیٰ: {فَلَا تَقُلْ لَهُمَا أُفٍّ وَلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَهُمَا قَوْلًا كَرِيمًا} [بنی إسرائیل، جزء آیت: ٢٣] قال العلامة ابن عابدین رحمہ اللّٰہ: في فصول العلامي: إذا رأى منكرًا من والدين يأمرهما مرةً، فإن قبلا فبها،

وإن كرها سكت عنهما واشتغل بالدعاء والاستغفار لهما، فإن الله تعالى يكفيه ما أهمه من أمرهما۔ (الرد المحتار، كتاب الحدود / باب التعزير، مطلب في تعزير المتهم ۷۸/۴ كراچی)فإن الأمر بالمعروف والنهي عن المنكر فيه منفعة مَن أمره ونهاه عن المنكر، والأب والأم أحق بأن ينفع لهما... لكن ينبغي أن لا يعنف على الوالدين، فإن قبلا فيها، وإلا سكت واشتغل بالاستغفار لهما۔ (نفع المفتي والسائل / ما يتعلق بإطاعة الوالدين ۴۲۳ دار ابن حزم) فقط واللہ تعالیٰ اعلمکتبہ: احقر محمد سلمان منصورپوری غفرلہ ۴/۳/۱۴۳۷ھالجواب صحیح: شبیر احمد عفا اللہ عنہ

والده يرتكب المعاصي ماذا يعمل معه؟

السؤال الرابع من الفتوى رقم (٦٢٨٦)

س ۴: أبي يداوم على شرب المسكر؛ مثل: الحشيش والأفيون والكينا، وهو يعتقد أن هذه الكينا ليست بخمر، حيث إنها تباع بالصيدليات، وأيضا فهو يسب الدين، فبماذا تنصحني نحوه، وما الواجب علي فعله؟

ج ۴: استمر في نصح أبيك بالحكمة والموعظة الحسنة وجادله بالتي هي أحسن في بيان حكم هذه المنكرات، عسى أن تنفعه النصيحة ويتوب الله عليه، فإذا أصر

على المنكرات فاعتزله فيها، ولا تعنه عليها، وصاحبه في الدنيا بالمعروف؛ لقوله تعالى: سورة لقمان الآية ١٤ {وَوَصَّيْنَا الْإِنْسَانَ بِوَالِدَيْهِ حَمَلَتْهُ أُمُّهُ وَهْنًا عَلَى وَهْنٍ} إلى قوله سبحانه: سورة لقمان الآية ١٥ {وَإِنْ جَاهَدَاكَ عَلى أَنْ تُشْرِكَ بِي مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا وَصَاحِبْهُمَا فِي الدُّنْيَا مَعْرُوفًا وَاتَّبِعْ سَبِيلَ مَنْ أَنَابَ إِلَيَّ ثُمَّ إِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَأُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ}. وبالله التوفيق، وصلى الله على نبينا محمد وآله وصحبه وسلم.

اللجنة الدائمة للبحوث العلمية والإفتاء

الرئيس: عبد العزيز بن عبد الله بن باز

نائب الرئيس: عبد الرزاق عفيفي

عضو: عبد الله بن غديان

عضو: عبد الله بن قعود